International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 07-08-2019; Accepted: 10-09-2019
www.hindijournal.com
Volume 5; Issue 6; November 2019; Page No. 20-22

नृत्यादि कलाओं के विकास में रायगढ़ नरेश राजा भूपदेव सिंह का योगदान

यास्मीन सिंह
कथक नृत्यांगना – रायगढ़ घराना, पी–एच.डी. स्कॉलर, मध्य प्रदेश, भारत

सारांश
बैरागढ़ के गोंड़ शासकों ने रायगढ़ की स्थापना लगभग 300 वर्ष पूर्व में की थी तथा राजा मदन सिंह इस राजवंश के संस्थापक थे। समय के साथ–साथ रायगढ़ राजवंश कथक नृत्य के रायगढ़ घराने के रूप में स्थापित हो गया और वर्तमान के अनेकानेक नर्तक इस घराने के पोषण, संवर्धन और प्रचार–प्रसार कर रहे हैं। किन्तु राजा भूपदेव सिंह का नाम नई पीढ़ी के मानस पटल से विलुप्त न हो जाए, इस हेतु कथक नृत्य प्रशिक्षण एवं पाठ्यक्रम में भी राजा भूपदेव सिंह को विशेष स्थान दिया जाना आवश्यक है, क्योंकि राजा चक्रधर सिंह जैसी अद्वितीय विभूति को कथक नृत्य की विधिवत शिक्षा दिलवाने का कार्य भूपदेव सिंह ने किया था।

मूल शब्द: घराना, पद्धति, संकल्पना, कथक नृत्य, समीक्षा

प्रस्तावना
भारतीय शास्त्रीय और लोक संगीत व अन्य कलाओं का सुदीर्घ इतिहास रहा है। कलाओं के क्षेत्र में मोटे तौर पर दो प्रकार की प्रवृत्तियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय रही हैं– प्रथम– कलाकार के रूप में कला का पोषण और द्वितीय पोषणकर्त्ता के रूप में कला को सुरक्षित रखना। कलाओं के क्षेत्र में कलाकारों की कोई कमी नहीं रही है, वहीं इसे सुरक्षित और संवर्धित करने वाले पोषणकर्त्ता गुणीजनों की संख्या भी अत्याधिक है। इतिहास पर दृष्टिपात करें, तो ज्ञात होता है कि विभिन्न राजवंशों ने समय–समय पर कलाओं को संरक्षित करने का अनुपम प्रयास किया है। किसी राजवंश में लिखित साहित्य के माध्यम से तो किसी राजवंश में कलाकारों को प्रश्रय देकर उनके माध्यम से कला को सुरक्षित करते हुए उसे आगामी पीढ़ियों को हस्तांतरित किया जा सके, ऐसी व्यवस्था की। इन्हीं राजवंशों में एक राजवंश है, मध्य भारत का एक छोटा–सा रजवाड़ा या रियासत– 'रायगढ़'। बैरागढ़ के गोंड़ शासकों ने रायगढ़ की स्थापना लगभग 300 वर्ष पूर्व में की थी तथा राजा मदन सिंह इस राजवंश के संस्थापक थे। वैसे तो रायगढ़ रियासत वर्तमान में कथक नृत्य के घराने के रूप में स्थापित हो चुका है, किन्तु इससे पूर्व कथक नृत्य और अन्य कलाओं के पोषण, संवर्धन और सुरक्षित करने की भावना इस राजवंश के राजाओं में बहुत पहले से ही विद्यमान थी। इस रियासत के अंतिम शासक राजा चक्रधर सिंह एक साहित्यकार, कथक नृत्य के पोषण और संवर्धक के साथ–साथ उच्चकोटि के कलाकार भी थे। इनके अथक प्रयास और नृत्य कला से विशेष प्रेम के कारण आज रायगढ़ घराना विश्वविख्यात है। किन्तु राजा चक्रधर सिंह से पूर्व, राजा भूपदेव सिंह भी कलाओं के संवर्धक और पोषणकर्त्ता के रूप में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। यह कहना सर्वथा अनुचित नहीं कि, राजा भूपदेव सिंह के कारण ही उनके पुत्रों को संगीत और नृत्यादि कलाओं की शिक्षा प्राप्त हो सकी, विशेष रूप से राजा चक्रधर सिंह को।

रायगढ़ राजवंश के विभिन्न राजाओं की बात करें, तो अध्ययन से ज्ञात होता है, इनमें राजा वेदसिंह, राजा दिलीप सिंह, राजा भूपदेव सिंह और राजा चक्रधर सिंह का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय रहा है। राजा वेदसिंह, तखत सिंह के पुत्र थे। डॉ. बलदेव के मत से– तखत सिंह का पुत्र वेद सिंह वेदों का ज्ञाता होने के साथ–साथ नृत्य–संगीत कलाओं में पारंगत भी था। वेद सिंह की भाँति उसका उसका पुत्र द्रिप सिंह (दिलीप/दिरीप सिंह) भी कला पारखी था। वह ललित कलाओं में दक्ष था। वीर योद्धा होने के साथ–साथ नृत्य–संगीत पर विशेष रूप से ध्यान देता था। इसलिए उसे 'संगीत शास्त्र विनायक' की उपाधि से विभूषित भी किया था।

दिलीप सिंह के पश्चात् रायगढ़ रियासत की बागडोर जुझार सिंह ने अपने हाथों में ली। जुझार सिंह परमवीर तो था ही, इसके अतिरिक्त कूटनीतिज्ञ और पुराणों का ज्ञाता भी था। जुझार सिंह के पश्चात् उसका पुत्र देवनाथ सिंह रायगढ़ का शासक बना। वह शूरवीर, पराक्रमी और कूटनीतिज्ञ तो था ही, साथ ही कलाओं के प्रति भी इनका विशेष लगाव था। इसके बाद घनश्याम सिंह के हाथों जब रायगढ़ की सत्ता आयी, किन्तु वह पूर्व राजाओं की भाँति शासन न कर सका, परिणामतः अंग्रेज़ों ने घनश्याम सिंह को सामंती शासक घोषित कर दिया। परन्तु ललित कलाओं के विषय में भी घनश्याम सिंह का योगदान भी उल्लेखनीय कहा जा सकता है, क्योंकि उन्होंने अपने तीनों राजकुमारों भूपदेव सिंह, लाल नारायण सिंह और गजराज सिंह (पीललाल) को संगीत–कला की शिक्षा दिलवायी। ये तीनों राजकुमार गायन और वादक में दक्ष थे। स्वयं घनश्याम सिंह भी पखावज वादन में दक्ष थे। 'लाल नारायण सिंह पखावज के साथ–साथ तबला, सितार, बाँसुरी आदि वाद्यों के वादन में भी दक्ष थे। पीललाल ने बनारस जाकर तबले की शिक्षा प्राप्त की थी।'[1]

घनश्याम सिंह के पश्चात् रायगढ़ रियासत में राजा के रूप में भूपदेव सिंह शासन–सत्ता अपने कुशल हाथों में ली। डॉ.पी.डी.

आशीर्वादम् के अनुसार– ^*Fortunately enough, Raja Bhupdeo Singh, son of Raja Ghanshyam Singh proved to be extraordinarly energetic, foresighted and sagacious. Raja Bhupdeo Singh strived hard to regain the lost glory of his family and received full powers of management in 1894. He was well educated and exercised a personal control over all public affairs. The people of raigarh state saw the happiest days during his regine and enjoyed the fullest of a benign rulership*^[2] भूपदेव सिंह कुशल शासक और प्रजा–पालक होने के साथ–साथ भाषाविद् भी थे। भूपदेव सिंह का विवाह गौरा के ज़मीदार ठाकुर मधुकर शाह की पुत्री से हुआ, जो बहुत ही धार्मिक प्रवृत्ति की थीं। भूपदेव सिंह ने जहाँ एक ओर अपने पिता के राजत्वकाल में हुए नुकसान की भरपाई की, वहीं दूसरी ओर ललित कलाओं अर्थात् गायन, वादन, नृत्यादि को प्रश्रय भी प्रदान किया। वे स्वयं कलापारखी थे। कहा जाता है, कि उनके दरबार में अनेक गायक, वादक और नर्तकों की नियुक्ति की गई थी इसके अतिरिक्त विभिन्न सांस्कृतिक आयोजन भी किये जाते थे, जिसमें गीत–संगीत के साथ–साथ नृत्य भी विशेष रूप से प्रस्तुत किया जाता था।

डॉ. बलदेव अपनी पुस्तक 'रायगढ़ का सांस्कृतिक वैभव' में राजा भूपदेव सिंह के विषय में उल्लेख करते हैं, जिसके अनुसार– राजा भूपदेव सिंह की बहिन धार्मिक प्रवृत्ति की थीं और रानी साहिबा भी दयालु तथा विदूषी थीं। ननद–भाभी दोनों ढोलक बजाकर कीर्तन किया करती थीं। राजा भूपदेव सिंह ने कन्या शिक्षा हेतु विशेष शालायें, चिकित्सालय तथा रेल मार्ग बनाने में विशेष योगदान भी दियज्ञ[3] यह तथ्य भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है, कि तत्कालीन रायपुर में 'राजकुमार कॉलेज' की स्थापना में भी राजा भूपदेव सिंह ने विशेष योगदान दिया था– ^*Many changes took place in the social set up of the time when Raja Bhupdeo Singh became the ruler. The Chhattisgarh region, then under Central Province, was very backward; but many educational development had been undertaken in this area, the main being the opening of the Rajkumar College at Raipur. Due to the deep interest in education Raja Bhupdeo Singh donated to and took great interest in the affairs of the Institution, and personally participated in its management.*[4]*

राजा भूपदेव को रायगढ़ रियासत में राजनीतिक एवं सामाजिक रूप से किये गये विकास के अतिरिक्त कला परम्परा को रचनात्मक मोड़ देने के लिए भी याद किया जाता है। भूपदेव सिंह अपने शासनकाल में रियायत में अनेक सांस्कृतिक आयोजन किया करते थे, जिसमें देश के प्रख्यात कलाकारों को आमंत्रित किया जाता है। इन समारोहों एवं सांस्कृतिक उत्सवों में गायन, वादन, नृत्य, नाट्य, लोक शैली के विभिन्न कार्यक्रम के साथ–साथ कवि, साहित्यकार, प्रख्यात जादूगर और पहलवान भी आकर्षण का मुख्य केन्द्र रहा करते थे। राजा साहब के दरबार में गायन, वादन एवं नृत्य प्रख्यात कलाकारों को राज्याश्रित कलाकारों के रूप में नियुक्त किया गया था। इन कलाकारों में 'पं.सीताराम महाराज (कथक–ठुमरी भावाभिनय), मोहम्मद ख़ाँ (बन्दावाले दो भाई, टप्पा–ठुमरी के लिए प्रसिद्ध), कोदऊ घराने के बाबा ठाकुर दास (अयोध्या के पखावजी), संगीताचार्य जमाल ख़ाँ, सादिक हुसैन (तबला), अनोखे लाल, प्यारेलाल (पखावज), चाँद ख़ाँ (सारंगी), कादर बख़्श आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।'[5]

भूपदेव सिंह ने देश के विभिन्न स्थानों से आए कलाकारों को सम्मान और आश्रय समान रूप से प्रदान तो किया ही, साथ ही उन्होंने कहीं–न–कहीं रायगढ़ की सांस्कृतिक धरातल पर कलारूपी बीज भी बोया, जो भविष्य में विशाल वृक्ष के रूप में पल्लवित हुआ। राजनीतिज्ञ के रूप में कुशल होने के साथ–साथ धर्मिक प्रवृत्ति और भाषाओं के ज्ञाता व विद्वान राजा भूपदेव सिंह के दरबार का वास्तविक रूप से उत्कर्ष संगीत–साहित्य और रायगढ़ में आयोजित होने वाला गणेशोत्सव है। आशीर्वादम् जी के अनुसार– ^*He took great interest and paid devoted attention to the religious and cultural matters, which is a landmark in the history of Raigrh state. In the religious sphere, he promoted temple building activity and afforded total patronage to saints and learned people. He himself was pious and fostered all the rituals and ceremonies of religion, especially, the Ganesh festival which was celebrated in his time with such pomp and glamour that even Raja Chakradhar Singh could not do so in certain aspects.*[6] गणेशोत्सव प्रारंभ राजा भूपदेव सिंह द्वारा अपने मंझले पुत्र राजकुमार चक्रधर सिंह के जन्मदिवस के अवसर पर वर्ष 1905 से प्रारंभ किया गया। उस समय यह सांस्कृतिक आयोजन पूरे एक माह तक चलता था। इस आयोजन के माध्यम से भूपदेव सिंह को शास्त्रीय कलाओं के साथ–साथ लोककला के संरक्षक के रूप में भी पहचाना जाता है। आयोजन के दौरान शास्त्रीय संगीत की विभिन्न प्रस्तुतियों के बीच महल परिसर में नाचा, गम्मत, सुआ, डंडा, कर्मा आदि लोक कलाओं की शतकाधिक मंडलीय रात भर मशाल के प्रकाश में झांझ और घुँघरुओं की झंकार से सराबोर रहती थीं।[7] राजा भूपदेव सिंह स्वयं एक अच्छे संगीतज्ञ और लोक कलाकार थे। डॉ. आशीर्वादम् के अनुसार– *'The music and activity of Raigarh state starts from the time of Raja Bhupev Singh, who had a great person fascination for the folk songs and dances of Chhattisgarh. He used to sing the folk songs himself and play Pakhawaj, Dholak, and Madal. The presentation of Karma dance by the different villages 'mandalis' had been a regular feature at Raigarh Palace during his time; and he himself used to accompany the performance of Madal, and actually participate in the dances.*[8]

राजा भूपदेव सिंह प्रतिवर्ष आयोजित होने वाले गणेशोत्सव हेतु देश के विभिन्न शहरों से कलाकारों को आमंत्रित किया करते थे। इन शहरों में इलाहाबाद, लखनऊ और कलकत्ता आदि शहर विशेष रूप से उल्लेखनीय है। राजा भूपदेव सिंह व्यक्तिगत रूप से इन शहरों में जाते और गायन, वादन तथा नृत्य में पारंगत व प्रसिद्ध कलाकारों को उत्सव के लिए आमंत्रित करते। 'एक बार राजा साहब इलाहाबाद गए। वहाँ उन्होंने प्रसिद्ध गायिका जानकी बाई से ठुमरी, ग़ज़ल, खमसा सुनी। इसके बाद उन्होंने बन्धूख़ाँ नाम के गवैये को गणेश मेला के अवसर पर इलाहाबाद भेजा। छप्पन छुरी के नाम से विख्यात तवायफ़ आई और कहा जाता है, कि विदाई में उसे एक लाख रूप्ये दिये गये।'[9] कहा जाता है, कि गणेशोत्सव के समय सौ से अधिक तवायफ़ें रायगढ़ में अपनी कला का प्रदर्शन करने आती थीं। राजा भूपदेव सिंह इनके रहने व अन्य सभी प्रकार की उत्कृष्ट सुविधायें प्रदान करते और उन्हें सम्मानित भी करते। इन तवायफ़ों के द्वारा दरबार के साथ–साथ रियासत के प्रमुख स्थानों पर भी प्रदर्शन किया करते। 'तवायफ़ों में इलाहाबाद की जानकी बाई (जो छप्पन छुरी के नाम से प्रसिद्ध थीं), ननुआ–बिकवा तथा गौहर जान का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय रहा है। इन तवायफ़ों में जानकी बाई अपने गायन के लिए प्रसिद्ध थीं, तो वहीं ननुआ–बिकवा तथा गौहर जान कथक नृत्य में ख्यातिलब्ध नर्तकियाँ थीं। ननुआ और बिकवा लखनऊ के सुप्रसिद्ध नृत्याचार्य पं.बिन्दादीन महाराज की शिष्यायें थीं। इन्होंने पं.बिन्दादीन महाराज से ठुमरी और कथक नृत्य व इसके भावपक्ष (अभिनय) की शिक्षा प्राप्त की थी। बिन्दादीन महाराज तो रायगढ़ नहीं आ सके, किन्तु उनकी शिष्याओं ने गणेशोत्सव के अवसर पर रायगढ़ आकर कई दिनों तक अपनी उत्कृष्ट कला का प्रदर्शन किया करती थीं।'[10] इनके द्वारा किये गये कथक नृत्य से राजा भूपदेव सिंह एवं प्रजाजन रुचि पूर्वक देखते थे। ननुवा और बिकवा की ही भाँति गौहर जान भी पं.बिन्दादीन महाराज की

प्रमुख शिष्याओं से एक थीं।

डॉ.बलदेव के मतानुसार– 'इन्होंने महाराज जी से कथक नृत्य के साथ–साथ इसके अभिनय पक्ष की विशेष शिक्षा प्राप्त की थी। गौहर जान अपने समय की प्रसिद्धि नृत्यांगनाओं में से एक थी। पं.लच्छु महाराज प्रेमपूर्वक गौहर जान को "अम्मीजान" कहा करते थे। अर्थात् उन्हें माँ की भाँति सम्मान दिया करते थे। भूपदेव सिंह ने गौहर जान को विशेष रूप से गणेशोत्सव के आयोजन पर रायगढ़ आमंत्रित किया करते थे। गौहर जान को रायगढ़ में सम्मान पूर्वक देखा जाता, उन्हें विशेष सुविधाओं रियासत द्वारा दी जाती थी।'[11] 'राजा भूपदेव सिंह के समय नेपाल दरबार के रत्न गिरधारी लाल आये थे, जो बताशों और तलवार की धार और पानी के ऊपर नाचने के लिए समूचे देश में विख्यात थे।'[12] राजा भूपदेव सिंह व रियासत की प्रजा द्वारा देश के कोने–कोने से आये विभिन्न कलाकारों को सम्मान दिया जाता।

भारतीय कलाओं (गायन, वादन, नृत्य, साहित्य आदि) के इतिहास पर दृष्टिपात करें, तो ज्ञात होता है, कि आधुनिक काल अर्थात् लगभग 19वीं शताब्दी का अन्त और बीसवीं शताब्दी के शुरूआती दौर में कलाओं की स्थिति अत्यधिक दयनीय थी। विशेष रूप से कथक नृत्य की। यह घरानों में तो सुरक्षित था किन्तु इसकी सीमा निर्धारित थी और मर्यादित भी। जबकि समाज में यह नृत्य सम्मानजनक स्थिति में नहीं रह सका। लगभग अन्य सांगीतिक कलाओं की भी यही स्थिति थी। देश के कुछ प्रमुख शहरों में तवायफ़ों को कोठों पर कथक नृत्य का प्रदर्शन होने लगा। कथक नृत्य एवं अन्य कलाओं की यह स्थिति चिन्ताजनक थी। राजा भूपदेव सिंह ने अपनी रियासत में गणेशोत्सव, दशहरा उत्सव आदि के अवसर पर देश के विभिन्न शहरों से कलाकारों को आमंत्रित कर उन्हें प्रदर्शन का अवसर प्रदान किया। यह प्रदर्शन मात्र मनोरंजन तक ही सीमित रहा हो, ऐसा प्रतीत नहीं होता, क्योंकि धार्मिक उत्सवों में भूपदेव सिंह उस समय की प्रसिद्ध तवायफ़ों को, जो कथक नृत्य में पारंगत थीं, को भी आमंत्रित किया। यह निश्चित रूप से कथक नृत्य एवं अन्य कलाओं को संरक्षित करने का अभिनव प्रयास भी था। जहाँ सभ्य समाज में तवायफ़ों को अच्छी नज़रों से नहीं देखा जाता था और न ही उन्हें समाज में उचित और सम्मानजनक स्थान प्राप्त था, उन्हें राजा साहब ने सम्मानित किया और कहीं–न–कहीं उनके माध्यम से कथक नृत्य को भी सम्मान देने की पहल की। तथ्यतः राजा भूपदेव सिंह को रायगढ़ रियासत में विभिन्न कलाओं के साथ–साथ कथक नृत्य को सम्मानजनक स्थान देने तथा उत्सव के रूप में आयोजित करने का श्रेय दिया जाना तर्कसंगत है।

समय के साथ–साथ रायगढ़ राजवंश कथक नृत्य के रायगढ़ घराने के रूप में स्थापित हो गया और वर्तमान के अनेकानेक नर्तक इस घराने के पोषण, संवर्धन और प्रचार–प्रसार कर रहे हैं। किन्तु राजा भूपदेव सिंह का नाम नई पीढ़ी के मानस पटल से विलुप्त न हो जाए, इस हेतु कथक नृत्य प्रशिक्षण एवं पाठ्यक्रम में भी राजा भूपदेव सिंह को विशेष स्थान दिया जाना आवश्यक है, क्योंकि राजा चक्रधर सिंह जैसी अद्वितीय विभूति को कथक नृत्य की विधिवत शिक्षा दिलवाने का कार्य भूपदेव सिंह ने किया था। अतः नृत्यादि कलाओं के संरक्षक के रूप में राजा भूपदेव सिंह का सदैव स्मरणीय रहेगा, ऐसा उपक्रम और प्रयास आवश्यक प्रतीत होता है।

संदर्भ सूची

1. गुप्ता, कु.सृष्टि, "रायगढ़ राजदरबार के कथक नृत्य के ताल पक्ष का विश्लेषणात्मक अध्ययन", शोध–प्रबंध, इन्दिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़, वर्ष 2012, पृ.129
2. P.D., Dr. Ashirvadam, "Raigarh Darbar", Agam Kala Prakashan, Delhi, 1990ए च्ह्ण्18
3. बलदेव, डॉ., "रायगढ़ का सांस्कृतिक वैभव", छत्तीसगढ़ राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी, रायपुर, प्रथम संस्करण 2008, पृ.28–29
4. P.D., Dr. Ashirvadam, ibid, Pg.21
5. गनोदवाले, राजेश (संपादन/आकल्पन), "एक शहर रायगढ़", चक्रधर समारोह आयोजन समिति द्वारा प्रकाशित, रायगढ़ (छत्तीसगढ़), वर्ष 2013, पृ.11
6. P.D., Dr. Ashirvadam, ibid, Pg.19
7. गनोदवाले, राजेश, वही, पृ.11
8. P.D., Dr. Ashirvadam, ibid, Pg.19
9. बलदेव, डॉ., वही, पृ.136
10. P.D., Dr. Ashirvadam, ibid, Pg.20
11. P.D., Dr. Ashirvadam, ibid, Pg.21
12. बलदेव, डॉ., वही, पृ.136